राजा जनक ने मन्त्र के सच्चे अर्थ को सीखा

बाबा मुक्तानन्द द्वारा सुनाई गई एक कहानी पर आधारित

बहुत समय पहले जिस स्थान को आज उत्तर भारत के नाम से जाना जाता है, वहाँ राजा जनक, विदेह नामक प्रदेश पर शासन करते थे। हर परिस्थिति का श्रेष्ठता व करुणा के साथ सामना करते हुए राजा अपने सभी राजोचित कर्त्तव्यों का पालन करते थे। यद्यपि उनके ख़ज़ाने में स्वर्ण मुद्राओं व जवाहरातों के पर्वत जैसा विशाल भण्डार था, फिर भी राजा जनक की अपनी इस सम्पत्ति के प्रति कोई आसक्ति नहीं थी; उनमें केवल परम सत्य को जानने की ललक थी। दूर-दूर से अपने सहस्त्रों भक्तों के साथ पधारनेवाले ऋषियों का सम्मान करने, उदारतापूर्वक उन्हें भोजन कराने व दर्जनों हाथी समा जाएँ, ऐसे विशाल शिविरों में उनका आतिथ्य करने के लिए राजा जनक प्रसिद्ध थे। दमकते नेत्रों व प्रफुल्लित हृदय से जनक, अपने अतिथियों के साथ परम आत्मा पर चर्चा करके सत्संग का आनन्द उठाते थे।

राजा जनक प्रतिदिन सूर्योदय से पूर्व उठकर एक सन्यासी के वेश में अपनी राजसी पहचान छुपाते हुए, शान्तिपूर्वक अपने राजमहल से निकल जाते और एक निर्जन वन से होते हुए पास ही एक नदी की ओर चल देते। वहाँ वे नदी किनारे एक प्राचीन वट वृक्ष के नीचे बैठकर ध्यान करते। यह प्रातःकालीन एकान्तवास, राजा जनक की बड़ी अमूल्य निधि था! कभी-कभी गहरे ध्यान की स्थिति में, उन्हें सत्य की एक झलक मिल जाती। ऐसी घटनाएँ, सत्य को और गहराई से जानने की उनकी ललक को बढ़ा देतीं, और फिर वे अपने आध्यात्मिक अभ्यासों को पहले से भी अधिक उत्साह के साथ करने के अपने संकल्प को दोबारा नवीन कर लेते।

ध्यान से पूर्व, जनक मन्त्र-जप करते थे। राजा अपनी आँखें बन्द करके 'सोऽहम्' मन्त्र का जप करते, जिसका अर्थ होता है, 'मैं वह हूँ, मैं सत्य हूँ।' यह वह मन्त्र है जिसका जप योगीजन अपने गहनतम सत्य को जानने के लिए अनन्तकाल से करते आए हैं। लेकिन महान योगियों द्वारा सिखाए गए पारम्परिक तरीक़े जिनमें मन्त्र का जप मन ही मन किया जाता है या फिर अन्तर से उठते स्वर को सुनकर किया जाता है, इनकी बजाय जनक अपने उच्चतम स्वर में "सोऽहम्! सोऽहम्!" चिल्लाया करते थे। उनकी ऊँची आवाज़, नदी के पार तक जाती थी जिससे पक्षी आकाश में उड़ जाते थे।

एक दिन सुबह जब राजा जप के अभ्यास में लीन थे, ऋषि अष्टावक्र नदी के पास से गुज़र रहे थे। यद्यपि ऋषि अष्टावक्र किशोर बालक थे, परन्तु वे सत्य के महान ज्ञाता थे, एक आत्मज्ञानी व्यक्ति थे। इसलिए, जब उन्होंने राजा को गेरुए वस्त्रों में 'सोऽहम्' मन्त्र को चिल्लाते हुए सुना तो वे आश्चर्यचकित रह गए। उन्हें राजा की गरजती आवाज़ में सत्य को जानने की विशुद्ध ललक दिखाई दी; उन्होंने राजा की सहायता करने का निश्चय किया।

ऋषि धीरे से राजा के सामने जाकर बैठ गए और कुछ समय तक उन्हें चिल्लाते हुए देखते रहे। अष्टावक्र ने अपने एक हाथ में जल का कमण्डल लिया और दूसरे में एक योग-दण्ड। योग-दण्ड अंग्रेज़ी भाषा के 'टी' अक्षर के आकार का एक दण्ड होता है जिसका उपयोग योगीजन जप या ध्यान के समय अपनी बाँह या ठुड्डी को टिकाने के लिए करते हैं। फिर अष्टावक्र ने चिल्लाना शुरू कर दिया, "यह मेरा कमण्डल है; यह मेरा दण्ड है! यह मेरा कमण्डल है; यह मेरा दण्ड है!" वे जिस वस्तु का नाम लेते उसे अपने सिर से ऊपर तक उठाते।

यद्यपि राजा जनक इस अपरिचित, चुभती हुई आवाज़ से अपने जप को बाधित होते देख परेशान हो गए, तथापि उन्होंने अपनी आँखें बन्द ही रखीं। उन्होंने सोचा, 'आध्यात्मिक अभ्यासों को करने का यह मेरा अमूल्य समय है, मैं किसी पागल के कारण इसे नष्ट नहीं होने दे सकता।' इसलिए वे और भी ऊँची आवाज़ में 'सोऽहम्, सोऽहम्' का जप करते रहे। उधर अष्टावक्र ने उनसे भी ऊँचे स्वर में अपना मन्त्र जप आरम्भ कर दिया। उनके स्वर तब तक और अधिक ऊँचे होते चले गए, जब तक राजा के लिए इससे उच्च स्वर में बोलना सम्भव नहीं रहा। उन्होंने अपनी आँखें खोली और अपने सामने एक किशोर बालक को पाया जो एक कमण्डल और एक योग दण्ड को हवा में लहराकर चीख रहा था।

"हे अजनबी बालक, तुम यह क्या कर रहे हो?" राजा ने विस्मय में चिल्लाकर पूछा।

अष्टावक्र अपने हाथों को नीचे लाए और व्यंग्यात्मक मुस्कान के साथ राजा की ओर देखते हुए उन्होंने पूछा, "*तुम* क्या कर रहे हो?"

"मैं पवित्र मन्त्र, 'सोऽहम्' का जप कर रहा हूँ," जनक ने सीधे-सीधे कह दिया।

"मैं भी तो सत्य ही कह रहा हूँ," अष्टावक्र ने एक बड़ी सी मुस्कान के साथ कहा। "मैं भी जप कर रहा हूँ, 'यह मेरा कमण्डल है; यह मेरा दण्ड है।'"

अब राजा कुंठित होकर काँपते हुए बोले। "अरे मूर्ख! तुम्हें यह किसने कहा कि यह कमण्डल और दण्ड तुम्हारा नहीं है?"

अष्टावक्र ने तुरन्त उत्तर दिया, “हे राजन्, मैं एक किशोर बालक हूँ। मुझे तो मेरे अज्ञान की क्षमा मिल सकती है। आप विदेही राजा जनक हैं, आप तो कुशाग्र-बुद्धि व प्रज्ञावान हैं। आप एक दरियाई घोड़े की तरह क्यों चिंघाड़ रहे हैं? आपसे यह किसने कहा कि आप ‘सोऽहम्’ नहीं हैं, कि आप ‘वह’ नहीं हैं?”

जब राजा जनक ने यह सुना तो उन्हें अज्ञान का पर्दा हटता हुआ सा महसूस हुआ। वे फ़ौरन यह पहचान गए थे कि वे तो ‘वह’ हैं। सूर्य का प्रकाश, चमचमाती नदी, उनके सिर के ऊपर वह प्राचीन वृक्ष, उनके सामने बैठा किशोर बालक — उनकी समझ में सब कुछ ईश्वर की पूर्णता के साथ स्पन्दित हो रहा था। अपनी सत्ता के मूल में उन्होंने उस परम सत्य के साथ स्वयं को एक पाया, वह सत्य जिसे वे उत्कटता से खोज रहे थे।

“हे श्रीगुरु,” जनक ने कहा, उनका हृदय किशोर बालक के प्रति कृतज्ञता से छलक उठा। “आपने मन्त्र की मेरी समझ को शुद्ध कर दिया है। आपने मेरे अन्तर में सत्य को उजागर कर दिया है। मैं आपका यह ऋण किस तरह चुका पाऊँगा?”

अष्टावक्र ने जनक की ओर देखा, और अपनी दमकती हुई आँखों के साथ वे ज़ोर ज़ोर से हँसने लगे।

“अब, ‘सत्य’ बनने के लिए मन्त्र-जप करने के स्थान पर इस बोध के साथ जप करो कि तुम पहले से ‘सत्य’ ही *हो*?”

इयान ऑर्नाल्ड द्वारा पुनर्कथित
स्टेला साक्षी मनतैली द्वारा रेखांकन
जेनी हिरा टैनर द्वारा कवर डिज़ाइन

© २०१८ एस. वाय. डी. ए. फ़ाउन्डेशन®। सर्वाधिकार सुरक्षित।